कोरापुट की दीपावली

अंधेरे पर रोशनी की विजय का पर्व है दीपावली। भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न प्रदेशों में भिन्न-भिन्न पौराणिक कथाओं को आधार बनाकर यह त्योहार मनाया जाता है। दक्षिण भारत के अधिकांश स्थानों पर यह नरकासुर-वध से जुड़ा हुआ है,जबकि शेष भारत में यह अधिकतर स्थानों में श्रीराम के रावण-वध के पश्चात वनवास की सजा काटकर अयोध्या लौटने के अवसर पर आनंदोल्लास से वहां की प्रजा के द्वारा दीपावली का उत्सव मनाए जाने से जुड़ा है। इस प्रकार यह एक गणपर्व में रूपांतरित हो गया है। रामायण की कथा के समान महाभारत के संदर्भ में भी बताया गया है कि बारह वर्ष का वनवास पूरे कर पांडव जिस दिन हस्तिनापुर लौटे थे, वह दिन भी दीपावली का था। और पांडवों के प्रत्यावर्तन की खुशी में समस्त प्रजाजनों ने दीप प्रज्वलित कर उत्सव मनाया था। इस प्रकार सत्यभामा के द्वारा नरकासुर का वध हो अथवा श्रीराम के द्वारा रावण का वध हो या फिर पांडवों का सत्य और न्याय के लिए धर्म-युद्ध हो – सर्वत्र अधर्म पर धर्म की विजय का प्रसंग अनायास याद आता है। इसलिए समग्र भारत भूखंड में यह पर्व असत्य पर सत्य की विजय का तथा अंधकार पर आलोक के आधिपत्य का स्मरण बार-बार दिलाता है। साथ ही यह दीवाली महापर्व चार दिनों तक चलता है, जिसके अंतर्गत धनतेरस,महालक्ष्मी पूजा,काली पूजा, गोवर्धन पूजा, और भैया दूज आते हैं, जिसके दौरान दिवाली की धूम बनी रहती है। दिवाली से पहले धनतेरस का त्यौहार मनाया जाता है।फिर लक्ष्मी पूजा के दिन विधि विधान से महालक्ष्मी तथा गणेश भगवान की पूजा अर्चना की जाती है।

गोवर्धन पूजा के दिन भगवान कृष्ण,गोवर्धन पर्वत और गायों की पूजा की जाती है। दिवाली का अंतिम पर्व भाई दूज है, जिसे यम द्वितीया या भ्रातृ द्वितीया भी कहते हैं। यह त्योहार भाई-बहन के अपार प्रेम और समर्पण का प्रतीक है। चार दिनों के इस दिवाली महापर्व को मैत्री, सद्भावना तथा सामाजिक सौहार्द के प्रतीक के रूप में मनाया जाता है। कहीं-कहीं इस दीपावली को नए साल के शुभारंभ के रूप में भी ग्रहण किया जाता है। व्यवसायी समाज इसी दिन नए ढंग से अपने व्यापार को नई गति प्रदान करता है। विविध कारणों से हमारे लोकमानस से दीपदान की सामाजिक-सांस्कृतिक-धार्मिक- आध्यात्मिक पृष्ठभूमि जुड़ी हुई है। अमावस्या के अंधकार को असंख्य दीप- श्रृंखलाएं आलोकित कर डालती हैं । इसलिए दीपावली को आलोक अथवा आनंद के पर्व के रूप में माना जाता है।

भारत के ओड़िशा प्रांत के अंतर्गत अविभक्त कोरापुट जिला भी अपने स्वर्गीय सौंदर्य एवं वैशिष्टयों के साथ 'दियाली' (दीपावली) का त्योहार मनाता है। पर्वतमालाओं की हरियाली से घिरी हुई घाटियों एवं स्वनीरवता के बीच कल-कल नाद करती हुई बहने वाली झरनों और पहाड़ी नदियों के साथ सदा लुभाने वाला कोरापुट अपनी जैव- विविधताओं एवं जनजातीय समुदायों के भूस्वर्ग के रूप में अपना परिचय हमेशा प्रस्तुतकरता रहा है। जनजातीय संस्कृति अपनी प्रथा और परंपरा में शत प्रतिशत आस्थावती है। बदले हुए वक्त और आपसी सांस्कृतिक विनिमय के कारण अनेक अवसरों पर बहुत से पर्व-त्योहार दोनों जनजातीतर और जनजातियों के द्वारा मनाए जाने लगे हैं।

आदिवासी संस्कृति में दीपावली पर्व की परंपरा नहीं मिलती है। लेकिन इसी त्योहार की ऋतु में यह

समाज अपने बहुत-से उत्सवों का हर्षोल्लास से पालन करता है, जिनमें 'दियाली' अन्यतम है। कोरापुट के परजा जनजातीय समुदाय के 'दियाली' त्योहार का दीवाली से सीधे कोई संबंध नहीं रहने पर भी दीपावली के ठीक बाद यह पालित होता है। इस त्योहार के महीने को परजा समाज 'दियालीमास' के नाम से चिह्नित करता है। यह पर्व पूर्णिमा तिथि को केंद्र में रखते हुए मनाया जाता है। 'निशाणीमुंडा' (देवस्थान/ देवीपीठ) में नव परिधान तथा अन्य नवनिर्मित वस्तुओं के साथ पूजा-अर्चना करने के बाद सामूहिक रूप से पंक्तिबद्ध होकर सारे लोग भोज खाकर एक साथ नृत्य और संगीत के माध्यम से आनंद मनाते हैं। 'दियाली' को मूलत: कृषिकैन्द्रिक और मंगलकारी पर्व के रूप में स्वीकारा जा सकता है। ठीक इसी प्रकार भतरा जनजातीय संप्रदाय में इस पर्व को साल में दो बार मनाया जाता है।

प्रथमत: कार्तिक माह में पूर्णिमा के दिन गो-संपदा की पूजा गौशाला में करते हुए उसे भात खिलाया जाता है। इस त्योहार में स्वादिष्ट पकवान तैयार किए जाते हैं। इसे ही सही अर्थ में 'दियाली' कहा जाता है। दूसरी 'दियाली' दूसरे समय में पालित होती है, जिसमें मवेशियों को चराने के लिए 'नरिया' अथवा 'गउड़िया' (ग्वाला) 'दियाली' की तिथि तय की जाती है। उस दिन गांव भर में पकवान तथा मांस आदि बांटा जाते हैं। परजा तथा भतरा आदिवासियों के साथ-साथ अन्य जनजाति के लोग भी इस पर्व को धूमधाम से मनाते हैं ; लेकिन 'दियाली' पर्व का उद्देश्य गो-संपदा एवं गृहपालित पशु-पक्षियों की समृद्धि व स्वास्थ्य तथा ग्रामवासियों के कल्याण में ही निहित रहता है। तथाकथित दीपावली एवं 'दियाली' में कैसा भी संबंध क्यों ना हो, पर तिथि की दृष्टि से आसपास के समय में पालित होना एवं नामगत सादृश्य इन दोनों सांस्कृतिक विचारों में समानता प्रस्तुत करते हैं।

यहां आर्य और द्रविड़ संस्कृति के सहावस्थान को एक ही परिप्रेक्ष्य में देखने की नई दृष्टि को आलोक एवं आनंद के भव्य महोत्सव की पृष्ठभूमि में देखा जा सकता है। ये दोनों ही पर्व अमावस्या और पूर्णिमा को ध्यान में रखते हुए पालित होने पर भी दोनों ने ही सामाजिक सौहार्द एवं समृद्धि पर आलोकपात करते हुए सार्वजनिक रूप में ग्राम-परिवार और पशु-संपदा के महत्व पर विशेष बल दिया है। इसके साथ-साथ सत्य और धर्म की विजय को प्रमुखता दी गई है। यहां प्रत्येक पर्व का उद्देश्य एक-दूसरे को जोड़ना एवं एक स्वच्छंद जीवन का चयन करना होता है। इसी विचार के आधार पर पूरे भारतवर्ष में मनाई जाने वाली दिवाली सर्वधर्म-समन्वय का प्रतीक बन गयी है। जाति-धर्म-वर्ण से ऊपर उठकर जीवन की अमरता के मंत्रपाठ के साथ मानव-धर्म की पराकाष्ठा का प्रतीक है दीपावली। इसलिए सब को एकसूत्र में पिरोने की प्रत्याशा जन-जन में बने – यही इस दिवाली व 'दियाली' की मूल पृष्ठभूमि मानी जा सकती है।

(लेखक प्रोफेसर चक्रधर त्रिपाठी, ओडिशा केन्द्रीय विश्वविद्यालय कोरापुट के कुलपति हैं)